RJPP, Vol. XVII, No.2, 2019, ISSN (P) : 0976-3635, (e) :2454-3411, Impact Factor 6.76 (SJIF)

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में अल्पसंख्यक मुस्लिम नेतृत्व

डॉ0 अजीतपाल
असि0 प्रोफे0, राजनीतिविज्ञान विभाग
मदरहुड वि0वि0, रूडकी
Email: dr.ajeetsingh9111@gmail.com

सारांश

भारत में लगभग 20 प्रतिशत अल्पसंख्यक समुदाय ह"जिसमें से लगभग 15 से 16 प्रतिशत मुस्लिम समुदाय है। जिनकी किसी न किसी विषय या समस्या पर सदैव भारत सरकार से कुछ शिकायतेंरही है चाहे वह राजनीतिक समस्या हो या फिर सामाजिक समस्या हो। भारत में मुसलमानों में दो प्रकार का नेतृत्व समाज से उभरताहै, प्रथम धार्मिकनेतष्त्व, दूसराराजनीतिकनेतष्त्व। स्वतन्त्रता के पश्चात् भारत में जो अधिकांश मुस्लिम नेतृत्व था वह पाकिस्तान चला गया और भारत में जो मुस्लिम नेतृत्व रह गया वह मुख्यतः कांग्रेस पार्टी का मुस्लिम नेतृत्व था। कालान्तर में जिस मुस्लिम नेतृत्व ने केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल तथा संवैधानिक पदो पर रहते हुए अपनी भूमिका का निर्वहन किया उनकी अपील का असर क्षेत्र विशेष या फिर केवल स्थानीय स्तर तक ही सीमित रहा। कांग्रेस व अन्य राष्ट्रीय पार्टियों व क्षेत्रीय पार्टियों ने जो मुस्लिम नेतृत्व दिया उनमे से कोई भी मुस्लिम नेता इस स्तर का नही हुआ जिसकी अपील का असर समस्त भारत में मुस्लिम समाज पर हो सके यह भी दृष्टव्य है कि मुस्लिम समाज में राजनीतिक नेतृत्व के अपेक्षाकृत धार्मिक नेतृत्व अधिक प्रभावशाली रहा और धार्मिक नेतृत्व की अपील ने राजनीतिक नेतृत्व के अपेक्षाकृत मुस्लिम समुदाय को व्यापक स्तर पर प्रभावित किया।

Reference to this paper should be made as follows:

Received: 03.06.2019
Approved: 23.09.2019

डॉ0 अजीतपाल

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में अल्पसंख्यक मुस्लिम नेतृत्व

RJPP 2019,
Vol. XVII, No. 2,
pp.1-7
Article No.1

***Online available at** : http:// rjpp.anubooks.com/*

प्रस्तावना

स्वतंत्रता के बाद अल्पसंख्यक मुस्लिम नेतृत्व जोकि मुस्लिम लीग की विचारधारा से प्रभावित था पाकिस्तान चला गया। जो नेतृत्व भारत में रहा वह अधिकांशतः कांग्रेस पार्टी का मुस्लिम नेतृत्व था। मुस्लिम लीग के बहुत ही कम नेता भारत में रह गये थे। इन नेताओं ने मुस्लिम लीग को पुर्नजीवित किया। स्वतंत्रता के पश्चात मुस्लिम लीग के पुनरूत्थान के अतिरिक्त मुसलमानें का कोई राजनीतिक दल राष्ट्रीय स्तर पर नही बन सका।[1]

मुस्लिम संगठनों को दो भागों मे विभक्त किया जा सकता है। ऐसे संगठन जो शुद्व राजनीतिक संगठन है और राजनीतिक में खुले तोर पर सक्रिय भाग लेते है। इनमें मुस्लिम लीग तथा मुस्लिम मजलिस के नाम उल्लेखनीय है। दूसरे वे संगठन जो मूल रूप से अराजनीतिक संगठन है लेकिन जो दबाव गुट के रूप में कार्य करते है और जिन्होने अप्रत्यक्ष रूप से राजनीतिक क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। इनमें मुख्य रूप से जमायत–ए–इस्लामी, जमीयत–उल–उलेमा, तबलीगी जमात, तामीर–ए–मिल्लत, मुस्लिम मजलिस, मुशावरत आदि मुख्य है। पाकिस्तान निर्माण के पश्चात भारत में मुस्लिम लीग का अस्तित्व केवल दक्षिणी भारत में रह सका और इसका नाम इंडियन यूनियन मुस्लिम लीग हो गया। लेकिन मुस्लिम लीग को कभी भी मुसलमानों का पूरा समर्थन या मत नही मिल सका। लीग का समथन न करने के पीछे एक मनोवैज्ञानिक कारण भी रहा। भारत के विभाजन के लिये उत्तरदायी होने के कारण मुस्लिम लीग को एक राष्ट्रविरोधी राजनीतिक दल माना गया था। अतः आम मुसलमानों ने इंडियन मुस्लिम लीग का समर्थन करने से इस कारण संकोच किया की कहीं उन पर साम्प्रदायिक होने का और राष्ट्रविरोधी होने का आरोप न लग जाये। यही नहीं मुस्लिम लीग का प्रभाव बढने की प्रतिक्रिया स्वरूप हिन्दू साम्प्रादायिकता के बढने का भी भय था।[2]

इस कारण से मुस्लमानों के काफी बडे भाग ने मुस्लिम संगठनों के बजाय कांग्रस को समर्थन दिया। चुनावों के सम्बन्ध में किये जाने वाले अध्ययनों से यह सामान्य निष्कर्ष निकलता है कि चुनावों में कांग्रेस के विजयी होने के पीछे मुसलमानों एवं अल्पसंख्यको के समर्थन का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।[3]

मुस्लिम मजलिस की स्थापना लखनऊ में 1968 में की गयी। मुस्लिम मजलिस के संस्थापक डॉ0 एस0जे0 फरीदी ने यह घोषणा की कि मुस्लिम मजलिस का निर्माण मुसलमानों को नियोजित ढंग से किये जाने वाले भयंकर तथा घातक आक्रमणों से सुरक्षित रखने के लिए किया गया है। दो दशको तक धैर्य रखने के बाद हमने यह महसूस किया कि हमें अपने पैरो पर खडा होना होगा और कोई भी समूह अथवा राजनीतिक दल हमारा युद्ध नही लड सकते।[4]

अपने सिद्धान्तों की दृष्टि से मुस्लिम मजलिस का लक्ष्य मुसलमानों के बहुमुखी विकास के लिए संघर्ष करना है। सन् 1969 में उत्तर प्रदेश में हुए मध्यावधि चुनाव में मुस्लिम मजलिस ने कुछ राजनीतिक दलों एवं संगठनों जैसे रिपब्लिकन पार्टी, मजदूर परिषद्, बैकवर्ड पार्टी तथा अल्पसंख्यकों तथा अन्य कुछ संगठनो का एक फेडरेशन बनाया। इस फेडरेशन ने 90 उम्मीदवारों को इकट्ठा किया जिनमें से केवल 5 उम्मीदवार विजयी हुए। इनमे दो मुस्लिम मजलिस तथा

3 रिपब्लिकन पार्टी के सदस्य थे। आरम्भ मे मुस्लिम मजलिस कांग्रेस की घोर विरोधी रही लेकिन 1971 के लोकसभा के निर्वाचन के अवसर पर मुस्लिम मजलिस और कांग्रेस (इंदिरा गुट) के बीच एक समझौता हुआ जिसके अनुसार उत्तर प्रदेश में पाँच निर्वाचन क्षेत्रों में मुस्लिम मजलिस के मुकाबले पर कांग्रेस ने कोई उम्मीदवार खडा नही किया। लेकिन कांग्रेस के इस अप्रत्यक्ष समर्थन के पश्चात् मुस्लिम मजलिस की स्थिति बिल्कुल कमजोर हो गयी। इसके संस्थापक डॉ0 फरीदी की मृत्यु हो जाने के बाद से मुस्लिम मजलिस मृतप्रायः हो गया।[5]

वास्तव में स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् कांग्रेस के अलावा किसी भी राजनीतिक दल में ऐसा नेता नही हुआ जो राष्ट्रीय स्तर पर मुस्लिम समुदाय को प्रभावित करता हो। कांग्रेस के अलावा इन अन्य राजनीतिक दलों का नाम भी क्षेत्र विशेष तक ही सीमित रहा तथा इसका प्रभाव भी क्षेत्र विशेष तक ही सीमित रहा। इन मुस्लिम राजनीतिक दलों से जिस मुस्लिम नेतष्त्व का विकास हुआ उनमें से कोई भी राष्ट्रीय स्तर का नेता नही हुआ और वे भी सब अपने निर्वाचन क्षेत्र या उसके आसपास के सीमित क्षेत्र की राजनीति को ही प्रभावित कर सके।

कांग्रेस में अनेक मुस्लिम नेता उभर कर आये जिन्हे राष्ट्रीय स्तर पर जाना गया जैसे– मौलाना अब्दुल कलाम आजाद, डॉ0 जाकिर हुसैन, फखरूद्दीन अली अहमद, हुमायूँ कबीर, रफी अहमद, मुईनुल हक चौधरी, नजमा हेपतुल्ला आदि ने भारत सरकार के कैबिनेट मन्त्रियों के रूप में कार्य किया। इसके अतिरिक्त सलमान खुर्शीद, मोहसिना किदवई, गुलाम नबी आजाद, अहमद पटेल, पी0एम0 सईद आदि ने काग्रेस सरकार में मन्त्रीपद पर कार्य किया इसके अतिरिक्त दलों के जी0 एम0 बनातवाला, सी0 एम0 इब्राहिम, काजी रशीद मसूद, शहनवाज हुसैन, मुख्तार अब्बास नकवी, उमर अब्दुल्ला, सिकन्दर बख्त, मुफ्ती मोहम्मद सईद, असदुद्दीन ओवैसी, तारिक अनवर, महबूबा मुफ्ती आदि ऐसे नेता रहे जो मुस्लिम नेता के रूप के अपनी पहचान बनाने में कामयाब रहे।

विभिन्न चुनावों में लोकसभा में मुस्लिम प्रतिनिधियों की स्थिति के संदर्भ मे निम्नलिखित तालिका दृष्टव्य है –

क्रम संख्या	कार्यकाल	मुस्लिम सदस्यों की संख्या
1	1952–1957	11
2	1957–1962	19
3	1962–1967	20
4	1967–1971	25
5	1971–1977	28
6	1977–1980	34
7	1980–1984	49
8	1984–1989	42
9	1989–1991	27

10	1991–1996	25
11	1996–1998	29
12	1998–1999	28
13	1999–2004	31
14	2004–2009	34
15	2009–2014	30
16	2014–2019	23

स्त्रोत – लोक सभा सदस्यों की सूची, लोक सभा सचिवालय, दिल्ली।

उपरोक्त तालिका व उसके विवेचन से यह स्पष्ट होता है कि पहले व तीसरे चुनाव में मुस्लिम सदस्यों की लोकसभा में संख्या सबसे कम रही तथा सातवें तथा आठवें चुनाव में लोकसभा में मुस्लिम प्रतिनिधित्व सबसे अधिक रहा।

लोकसभा के प्रथम चुनाव में विजयी मुस्लिम सांसदों की संख्या 11, दूसरे चुनाव में विजयी सांसदों की संख्या 19, तीसरे आम चुनाव में लोकसभा में मुस्लिम सदस्यों की संख्या 20, चौथे चुनाव में मुस्लिम सदस्यों की संख्या 28, छठे चुनाव में यह संख्या 34, सातवे चुनाव में मुस्लिम सदस्यों की संख्या 49, आठवें चुनाव में 42, नौवें चुनाव में 27, दसवें चुनाव में 25, ग्यारहवे चुनाव में 29, बारहवे चुनाव में 28, तेरहवें चुनाव में 31, चौदहवे चुनाव में 34, पन्द्रहवें में 30 तथा सोलहवे में 23 रही।

सन् 2001 की जनगणना के अनुसार भारत में धर्म पर आधारित सबसे बडा धार्मिक अल्पसंख्यक वर्ग मुस्लिम सम्प्रदाय है। जिसकी संख्या 13.4 प्रतिशत है जो देश की कुल जनसंख्या का 7.45वां भाग है। दूसरे अल्पसंख्यक वर्गों की तुलना में मुसलमानों की शिकायते कुछ भिन्न रही है। विशेषकर मुस्लिम अल्पसंख्यकों की समस्याएँ साम्प्रदायिकता का रूप धारण करने के कारण और ज्यादा जटिल बन गई है। संविधान ने राजनीतिक समानता के सिद्धान्त को मान्यता दी है, तद्नुसार देश की राजनीति में हिन्दूओं की तरह मुसलमानों को भी सक्रिय रूप से भाग लेने का अवसर प्राप्त हो रहा है और भारतीय संसद, राज्य विधान मण्डलों, मंडिमण्डल, न्यायपालिका, कूटनीतिक पदो तथा प्रशासनिक पदों आदि पर मुस्लिम सम्प्रदाय के सदस्य आसीन रहे है।[6]

संसद और राज्य विधानमण्डलों में प्रतिनिधित्व प्राप्त करने के अतिरिक्त मन्त्रिमण्डल तथा उच्च राजनीतिक और प्रशासनिक पदों पर भी मुसलमान नियुक्त होते रहते है। देश के संवैधानिक तंत्र के शिखर पर राष्ट्रपति के रूप में डॉ0 जाकिर हुसैन, श्री फखरूद्दीन अली अहमद, ए0पी0जे0 अब्दुल कलाम आदि निर्वाचित हुए। केन्द्रीय मंत्रिमण्डल में मौलाना अबुल कलाम आजाद, हुमायूँ कबीर, रफी अहमद किदवई, हाफिज मुहम्मद इब्राहीम, एम0सी0 छागला, मुईनुलहक चौधरी आदि कैबिनेट स्तर के मंत्रियों के रूप में रहे है। इनके अतिरिक्त राज्य मंत्री और उपमंत्री की श्रेणी में भी मुसलमानों को प्रतिनिधित्व दिया जाता रहा है। राज्यपाल के रूप में अलीयावर जंग और

अकबर अली खाँ, कुँवर महमूद अली तथा राजदूत के रूप में एम0 सी0 छागला, अली जहीर आदि तथा मुख्यमंत्री के रूप में अब्दुल गफूर तथा स्व0 बरकतुल्ला आदि के नाम उल्लेखनीय है। एम हिदायतुल्ला तथा न्यायाधीश ए0यू0 बेग को सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के पद पर नियुक्त किया गया।[7]

मुस्लिम सम्प्रदाय विधान मण्डल में अपने प्रतिनिधित्व और अन्य पदों पर नियुक्ति आदि के सम्बन्ध में असंतुष्ट रहा है। मुसलमानों की एक शिकायत यह है कि विभिन्न लोक सेवाओ में चयन के समय उनके साथ धर्म के आधार पर भेदभाव किया जाता है। 1971 में अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा और अखिल भारतीय विदेश सेवा में चुने जाने वाले सौ उम्मीदवारों में से केवल एक मुसलमान था।[8]

मुसलमानों में बहुमत के विरूद्ध असुरक्षा की भावना के विकास का एक महत्वपूर्ण कारण देश के विभाजन के बाद से होने वाले साम्प्रदायिक दंगे है। अनेको बार साम्प्रदायिक दंगे होने के कारण मुस्लिम जनता में यह भावना विकसित हुई कि इन दंगों के पीछे शासन का पक्षपातपूर्ण रवैया और सरकार का हाथ रहा है।[9]

मुसलमानों में असंतोष बढने का एक अन्य महत्वपूर्ण कारण उनकी मातृभाषा के प्रति सरकार का उदासीन रवैया रहा है। कुछ साम्प्रदायिक दलों की ओर से यह प्रचार किया जाता रहा है कि उर्दू केवल मुसलमानों की भाषा है, इसके परिणामस्वरूप भाषा की समस्या एक साम्प्रदायिक समस्या बन गई है। मुसलमानों की ओर से उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश आदि में उर्दू को दूसरी सरकारी भाषा का स्थान दिये जाने की मांग की गई और इसके बाद हिंसात्मक आन्दोलन भी चलाये गये। विभिन्न विपक्षी राजनीतिक दलों ने इस मांग को राजनीतिक रूप दे दिया। परिणाम यह हुआ कि उर्दू की समस्या विपक्षी दलों के हाथों में पहुँचने के कारण सरकार और विरोधी दलों के बीच का प्रश्न बन गया।[10]

मुसलमानों की व्यक्तिगत विधि में परिवर्तन का प्रश्न भी अत्यधिक विवादग्रस्त विषय रहा है। संविधान के नीति निदेशक तत्वों में सम्पूर्ण भारत के लिए एक ही सिविल कोड बनाये जाने के आदर्श का उल्लेख किया गया है। भारत सरकार मुसलमानों की व्यक्तिगत विधि में कुछ परिवर्तन करना चाहती है। विशेषकर बहुविवाह, तलाक पद्धति और विरासत के मामलों में स्त्रियों को कुछ अधिकार देना चाहती है, जैसा कि हिन्दू स्त्रियों को पहले से ही प्राप्त है। मुस्लिम व्यक्तिगत विधि में परिवर्तन के विषय में स्वयं मुसलमानों में दो वर्ग पाये जाते है एक प्रगतिशील वर्ग जो इस परिवर्तन को आवश्यक और धर्मानुकुल मानता है तथा दूसरा उन कट्टर मुसलमानो का वर्ग है जिसकी संख्या अधिक है। वह यह तर्क देता है कि मुसलमानों की व्यक्तिगत विधि इस्लामी शरीयत पर आधारित है जिसमें परिवर्तन करना धर्म के मौलिक सिद्धान्तों पर कुठाराघात करने के समान है।[11]

स्वन्त्रता के बाद एक और प्रश्न जिसने मुसलमानों को विशेष रूप से प्रभावित किया है, अलीगढ मुस्लिम विश्वविद्यालय का मामला है। मई 1965 में भारत सरकार ने अलीगढ विश्वविद्यालय के संगठन और कार्य प्रणाली में कुछ सुधार लाने के उद्देश्य से एक अध्यादेश जारी किया।

जिसमें कार्यकारिणी परिषद के पुनर्गठन और विश्वविद्यालय कोर्ट के सदस्यो के नामांकन की व्यवस्था की गई थी। 31 अगस्त 1970 को इस अध्यादेश को एक बिल के रूप में राज्य सभा में प्रस्तुत किया गया। मुसलमानों के बहुमत के विचार में विश्वविद्यालय के संगठन और प्रशासन में इन परिवर्तनों का अर्थ उस विश्वविद्यालय के अल्संख्यक स्वरूप का समाप्त करना था। इस विधेयक का विभिन्न मुस्लिम संगठनों की ओर से विरोध किया गया तथा यह मांग की गई कि विश्वविद्यालय के नाम से मुस्लिम शब्द अलग न किया जाये तथा विश्वविद्यालय की कार्यकारिणी और कोर्ट का गठन इस प्रकार से न किया जाये जिससे विश्वविद्यालय पर सरकार का प्रभुत्व स्थापित हो जाये। सर्वोच्च न्यायालय में भी इसके विरूद्ध मुकदमा किया गया लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने 20 अक्टूबर 1967 को दिए गए निर्णय के अनुसार उस अध्यादेश को वैध ानिक घोषित किया। मुसलमानों में इससे काफी असन्तोष रहा।[12]

मुसलमानों की ओर से एक और शिकायत शिक्षा पाठ्यक्रमों में निर्धारित पुस्तकों के सम्बन्ध में रही है। शिक्षा संस्थाओं में विभिन्न स्तरों पर पढाई जाने वाली कुछ पुस्तकों में अल्पसंख्यक वर्गों में विशेषकर मुसलमानों के धार्मिक विश्वासों के विरूद्ध आन्दोलन भी हुए। 1966 में राज्यसभा ने इस प्रकार की शिकायतो की जाँच करने के लिए समिति का गठन किया जिसने शिक्षा संस्थाओं में निर्धारित पुस्तकों का अध्ययन करने के पश्चात् यह प्रतिवेदन दिया कि बहुत सी पुस्तके है जिनका अधिकांश भाग हिन्दू पुराण कथाओं पर आधारित है और इनमें हिन्दू धर्म के देवी–देवताओं की उपलब्धियों पर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है जबकि अन्य धर्म के धार्मिक महापुरूषों की उपेक्षा की गई है। समिति के अनुसार कुछ पुस्तकों में ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख इस प्रकार मिलता है जिससे देश के विभिन्न सम्प्रदायो के बीच एकता उत्पन्न होने के बजाय और ज्यादा भेदभाव बढता है जो राष्ट्रीय एकीकरण के लिए अत्यधिक हानिकारक है।

संदर्भ ग्रंथ

1 , l 0, e0 l bZ] *भरतीय राजनितक प्रणाली,* द मैकमिलन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1978, पृष्ठ संख्या **331**

2 एस0एम0 सईद, *भरतीय राजनितक प्रणाली,* द मैकमिलन प्रकाषन, नई दिल्ली, 1978, पृष्ठ संख्या **331**

3. एस0जे0 फरीदी का अध्यक्षीय भाषण, रिपोर्ट ऑफ दि फर्स्ट एनुअल कांग्रेस ऑफ मुस्लिम मजलिस 28 फरवरी 1970, पृष्ठ संख्या **4**

4. एस0जे0 फरीदी का अध्यक्षीय भाषण, रिपोर्ट ऑफ दि फर्स्ट एनुअल कांग्रेस ऑफ मुस्लिम मजलिस 28 फरवरी 1970,पृष्ठ संख्या **4**

5. एस0एम0 सईद, *भारतीय राजनीतिक प्रणाली,* द मैकमिलन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1978 पृष्ठ संख्या **334**

6. एस0एम0 सईद, *भारतीय राजनीतिक प्रणाली,* द मैकमिलन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1978

पृष्ठ संख्या **334**

7. एस0एम0 सईद, *भारतीय राजनीतिक प्रणाली,* द मैकमिलन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1978 पृष्ठ संख्या **328**
8. एस0एम0 सईद, *भारतीय राजनीतिक प्रणाली,* द मैकमिलन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1978 पृष्ठ संख्या **328**
9. दि टाइम्स ऑफ इण्डिया, 27 मार्च 1970 तथा 23 मार्च 1973
10. मोइन शाकिर, *मुस्लिम इन फ्री इंडिया,* कमलाकर प्रकाशन, नई दिल्ली, 1972 पृष्ठ संख्या **112**
11. एस0एम0 सईद, *भारतीय राजनीतिक प्रणाली,* द मैकमिलन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1978 पृष्ठ संख्या **3**
12. एस0एम0 सईद, *भारतीय राजनीतिक प्रणाली,* द मैकमिलन प्रकाशन, नई दिल्ली, 1978 पृष्ठ संख्या **33**